प्रेमचंद के उपन्यासों में सामासिक संस्कृति

डॉ. नीतू शर्मा एसोसिएट प्रोफ़ेसर, हिन्दी विभाग हंसराज कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
रवीना कुमारी मीना शोध-छात्रा, हिन्दी विभाग दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

शोध सारांश :-
प्रेमचंद उदार विचारधारा वाले व्यक्ति थे। अपनी इसी विचारधारा के कारण ही वह सामासिक संस्कृति को समाज के सम्मुख रखने में सफल भी रहे। उनका सामासिक संस्कृति के प्रति स्पष्ट दृष्टिकोण था। भारतीय समाज में इसकी क्या महत्ता है ? इसे बखूबी जानते थे तथा भारतीय अखंडता के लिए इसे ज़रूरी भी समझते थे। प्रेमचंद निकटम भविष्य में एक नए भारत की जो एकता के सूत्र में बंधा हो, साम्प्रदायिकता न हो, ऐसे अखंड भारत की कल्पना करते थे। वे जन संस्कृति के महान और प्रेरणादायक स्रोत का संवहन कर रहे थे। वह ऐसे समाज की कल्पना करते थे जिसमें वर्ग, धर्म, जाति, सम्प्रदाय से परे एक मानवीय समाज की स्थापना हो सके और जिसका आधार ही सामासिक संस्कृति हो। प्रेमचंद ने उपन्यास विधा के माध्यम से भारतीय संस्कृति के सौम्य दर्शन अपने पाठक वर्ग को कराए, साथ ही सामासिक संस्कृति को अपनाने के लिए भी जागृत किया। प्रेमचंद सामासिक संस्कृति के पक्षधर रहे और उसी के चलते उन्होंने अपने उपन्यासों में सामासिक संस्कृति को महत्वपूर्ण स्थान दिया।

शब्द कुंजी :-
भौतिकवादी, वस्तुवादी, संस्कृति, कल्चर, संस्कार, सौहार्द, आलमबरदार, वेश्यावर्ती एकता, प्रेम भाव।

मूल आलेख :-
मुंशी प्रेमचंद हिंदी साहित्य में अपनी अनूठी जगह बनाने वाले रचनाकार है। उनके साहित्य लेखन को पढ़ने वाला एक बहुत बड़ा पाठक वर्ग उनके समय से लेकर आज तक है। प्रेमचंद को उपन्यास सम्राट का ख़िताब उनकी लेखन कला के कारण ही मिला है। उनके उपन्यास में समाज की अनेकों समस्याओं का वर्णन देखने को मिलता है। विभिन्न समस्याओं को उठाते हुए उन्होंने यथार्थ को समाज के सम्मुख प्रस्तुत किया। वह वस्तुवादी अथवा भौतिकतावादी विचारधारा के एक दम विरुद्ध रहते थे। वह समाज में जो घटित हो रहा है उसका जस का तस वर्णन करते और एक आदर्श समाज की स्थापना पर बल देते थे।

हिंदी साहित्य में सर्वोच्चय स्थान प्राप्त करने वाले महान उपन्यासकार सम्राट मुंशी प्रेमचंद भारतीय संस्कृति के पक्षधर थे। उनपर भारतीय परम्परा अथवा संस्कृति की गहरी छाप थी। 'संस्कृति' शब्द को अंग्रेजी में 'कल्चर' शब्द से संबोधित किया जाता है। सामान्य शब्दों में सुसंस्कारों को ही संस्कृति माना जाता है। 'संस्कृति' को अन्य तरह से ऐसे भी समझा जा सकता है कि समाज में सभ्य तरह से विकास करना ही संस्कृति कहलाता है। इस सभ्य विकास के अंतर्गत उस समाज का रहन-सहन, वेशभूषा, खाना-पीना, रीती-रिवाज़, तीज-त्यौहार और भाषा संस्कृति है। प्रत्येक समाज की संस्कृति अलग होती है। इसलिए प्रत्येक समाज का व्यक्ति अलग-अलग परिवेश को ग्रहण करता है। प्रसिद्ध समाजशास्त्री राबर्ट वीरस्टीड का कहना है कि 'यह संस्कृति ही है, जो एक व्यक्ति को अन्य सब व्यक्तियों से, एक समूह को अन्य सभी समूहों से और एक समाज को दूसरे समाजों से पृथक करती है।' अर्थात संस्कृति मनुष्य जीवन के उन तमाम तत्वों की समष्टि का नाम है जिनकी धर्म और दर्शन से उत्पत्ति होकर कला-कौशल, समाज तथा व्यवहार में परिणति हो जाती है। संस्कृति का एक अर्थ "परिष्कार अथवा परिशोधन भी है जिसका अर्थ है -परिपक्वता। बौद्धिक परिपक्वता और नैतिक परिपक्वता मानव संस्कृति की कसौटियाँ हैं। बौद्धिक परिपक्वता मनुष्य को विवेकपूर्ण निर्णयों की लेने की शक्ति प्रदान करती है। जिन व्यक्तियों में नैतिक परिपक्वता नहीं होती वे अपने जीवन को अवसाद, अंतर्द्वंद ग्लानि, पश्चाताप, आत्महीनता की ओर ले जाते हैं। नैतिक परिपक्वता का यह एक पक्ष है जो नैतिक स्खलनों से व्यक्ति की रक्षा करता है। इसका एक पक्ष भावात्मक भी है जो व्यक्ति को परोपकार, सेवा, दया, उदारता के प्रति

 Copyright @ 2024 Author

निष्ठावान बनाता है। इन भावनाओं को हम जीवन के मूल्यों की संज्ञा भी दे सकते हैं।"[1] अर्थात उपरोक्त मूल्यों से समर्पित व्यक्ति ही सुसंस्कृत होता है। इसी संस्कृति के परिचायक थे मुंशी प्रेमचंद। उन्होंने अपने साहित्य में सामासिक संस्कृति का बड़ा मनोहारी चित्रण किया है। सामासिक संस्कृति के माध्यम से समाज में एकता का ऐलान भी किया।

प्रेमचंद स्वयं को धार्मिक भेदभाव से अलग रखते थे। उनका मानना था कि हिंदु, मुस्लिम, सिख, ईसाई सब एक सामान है। इन्हें धर्म अथवा जाति के आधार पर नहीं बांटना चाहिए। इस संदर्भ में वह स्वयं लिखते हैं कि "हमें तो हिंदु और मुस्लिम संस्कृति में कोई मौलिक भेद नज़र नहीं आता, अगर मुसलमान पजामा पहनता है तो पंजाब और सिंध प्रान्त के सारे हिंदू स्त्री-पुरुष पजामा पहनते हैं। अचकन भी मुसलमानी नहीं रही। .....हमारे यहाँ देवता अलग हैं उनके अलग। शिव और राम, कृष्ण और विष्णु जैसे हमारे देवता हैं वैसे ही मुहम्मद, अली और हुसैन मुसलमानों के देवता हैं या पूज्य पुरुष हैं। हमारे देवता जैसे त्याग और आतम्ज्ञान, वीरता और संयम के लिए आदरणीय हैं उसी भांति मुस्लिम देवता भी हैं, अगर हम रामचंद्र जी को स्मरणीय समझते हैं तो कोई कारण नहीं कि हुसैन को उतना आदरणीय न समझे। हम मंदिरों में पूजा करने जाते हैं, मुसलमान मस्जिद में, ईसाई गिरजाघर में।"[2] अत: इस प्रकार वह स्वीकारते हैं कि हिंदू-मुस्लिम भले अलग-अलग धर्म के हों लेकिन उनकी संस्कृति एक ही है। वह आपसी भाई-चारे पर अधिक बल देते थे। उन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से हिंदु-मुस्लिम सोहार्द को उत्पन्न करने का सफल प्रयास किया है। वह लगातार भारतीय एकता अथवा अखंडता का परचम लहराते रहे। वह उस व्यक्ति अथवा साहित्य का विरोध करते रहे जिसने भारतीय अखंडता को अंशमात्र भी नुकसान पहुँचाने का प्रयास किया। उनकी इसी विचारधारा को उजागर करते हुए डॉ. रामविलास शर्मा लिखते हैं कि "प्रेमचंद हिन्दुस्तानी कौम की भीतरी एकता कायम करने वाली एक जबरदस्त ताकत थे। इस कौम को तोड़ने वालो के वह सबसे बड़े दुश्मन थे। वह जाति को पकड़ के गड्ढे में धकेलने वाले साहित्य के कटु समालोचक थे, वह हिन्दुस्तानी जनता के नये सांस्कृतिक जागरण को प्रकट करने वाले प्रगतिशील साहित्य के आलमबरदार थे। प्रेमचंद निकट भविष्य में एक नए हिंदुस्तान की एकता और जन-संस्कृति के महान प्रेरणादायक स्रोत बनने वाले हैं।"[3] अत: प्रेमचंद उदार विचारधारा वाले व्यक्ति थे। अपनी इसी विचारधारा के कारण ही वह सामासिक संस्कृति को समाज के सम्मुख रखने में सफल भी रहे। उनका सामासिक संस्कृति के प्रति स्पष्ट दृष्टिकोण था। भारतीय समाज में इसकी क्या महत्ता है इसे बखूबी जानते थे, तथा भारतीय अखंडता के लिए इसे ज़रूरी भी समझते थे। "प्रेमचंद निकटम भविष्य में एक नए भारत की, जो एकता के सूत्र में बंधा हो, साम्प्रदायिकता न हो, ऐसे अखंड भारत की कल्पना करते थे। वे जन संस्कृति के महान और प्रेरणादायक स्रोत का संवहन कर रहे थे।"[4] अत: कहा जा सकता है कि वह ऐसे समाज की कल्पना करते थे जिसमें वर्ग, धर्म, जाति, सम्प्रदाय से परे एक मानवीय समाज की स्थापना हो सके और जिसका आधार ही सामासिक संस्कृति हो।

प्रेमचंद के सम्पूर्ण साहित्य में भारतीय संस्कृति के दर्शन मिलते हैं। लेकिन यहाँ उनके उपन्यासों के माध्यम से सामासिक संस्कृति को समझने का प्रयास करेंगे। प्रेमचंद को हिंदी कथा साहित्य में उपन्यास सम्राट कहा जाता है। चूँकि उपन्यास विधा को उन्होंने नयी दिशा दी। हिंदी साहित्य में उपन्यास एक ऐसी विधा है जो सम्पूर्ण समाज को व्याख्यायित करने में सफल होती है। उपन्यास में कई घटनाएँ एक साथ दृष्टिगोचर होती हैं। प्रेमचंद ने उपन्यास विधा के माध्यम से भारतीय संस्कृति के सौम्य दर्शन अपने पाठक वर्ग को कराए, साथ ही सामासिक संस्कृति को अपनाने पर भी जागृत किया। प्रेमचंद सामासिक संस्कृति के पक्षधर रहे और उसी के चलते उन्होंने अपने उपन्यासों में सामासिक संस्कृति को महत्वपूर्ण स्थान दिया। 'सेवासदन' उपन्यास में वह हिन्दू-मुस्लिम भाई चारे के द्वारा सामासिक संस्कृति के दर्शन कराते हैं। यह उपन्यास भारतीय समाज में पनप रही विभिन्न समस्याओं को उजागर करता है। इस उपन्यास के माध्यम से सामाजिक यथार्थ को प्रस्तुत किया है। वह दिखाने का प्रयास करते हैं कि कैसे धर्म के ठेकेदार बनने वाले कुछ हिन्दू-मुस्लिम के नाम पर लड़ते हैं। अपने स्वार्थ को पूरा करने के लिए एक-दूसरे को नुक्सान पहुंचाने से भी परहेज नहीं करते। उपन्यास में समाज की एक गहरी समस्या वेश्यावृत्ति को उठाया गया। उपन्यास की स्त्री पात्र भोली बाई एक मुसलमान है और सुमन एक हिन्दू लड़की है। दोनों ही वैश्यावृत्ति की दलदल में फंस जाती हैं। इन दोनों स्त्रियों को इस कार्य से बाहर निकालने के लिए सामाजिक स्तर पर सोचने अथवा कार्य करने की आवश्यकता है। प्रेमचंद समाज का ध्यान इस ओर करते हुए तथा उसे जागृत करते हुए इस समस्या को

 Copyright @ 2024 Author

अपने उपन्यास में बड़ी तरतीबी से उकेरते चलते हैं। उपन्यास में कुछ ऐसे लोग हैं जो धार्मिक कट्टरता का चोला ओढ़े हैं जो सिर्फ अपने हित के लिए सोचते हैं, तथा अपने-अपने पक्ष पर विचार करते हुए दिखते हैं। वहीं कुछ ऐसे भी लोग हैं जो सामासिक संस्कृति का उदाहरण पेश करते हैं। रुस्तम भाई और प्रभाकर राव यह ऐसे पात्र हैं जो सही मायने में समाज हित में सोचते हैं। यह वैश्यावृति को सामाजिक प्रश्न मानते हैं और बिना भेदभाव के हल करने का प्रयास करते हैं। यह साम्प्रदायिकता से ऊपर मनुष्यता को रखते हैं। रुस्तम भाई अपने विचार रखते हुए लोगों को संबोधित करते हैं कि "मुझे यह देख कर शोक हो रहा है कि आप लोग एक सामजिक प्रश्न को हिन्दू-मुसलमानों के विवाद का स्वरुप दे रहे हैं। सूद के प्रश्न को भी यही रंग देने की चेष्टा की थी। ऐसे राष्ट्रिय विषयों को विवाद ग्रस्त बनाने से कुछ हिंदू साहूकारों को अधिक हानि पहुंचेगी, लेकिन मुसलमानों पर भी इसका प्रभाव अवश्य पड़ेगा। चौक और दालमंडी में मुसलमानों की भी दुकाने कम नहीं है। हमको प्रतिवाद या विरोध की धुन में अपने मुसलमान भाइयों की नियत की सच्चाई पर संदेह न करना चाहिए। उन्होंने इस विषय में जो कुछ निश्चय किया है वह सार्वजनिक उपकार के विचार से किया है, अगर हिन्दुओं को इससे अधिक हानि हो रही है तो यह दूसरी बात है। मुझे विश्वास है कि मुसलमानों की इससे अधिक हानि होती, तब भी उनका यही फैसला होता। अगर आप सच्चे हृदय से मानते हैं कि यह प्रस्ताव एक सामाजिक कुप्रथा के सुधार के लिए उठाया गया है तो आपको उसको स्वीकार करने में कोई बाधा न होनी चाहिए, चाहे धन की कितनी भी हानि हो, आचरण के सामने धन का कोई महत्त्व न होना चाहिए"[5] प्रेमचंद सच्चे देश प्रेमी थे, वह जीवन भर अपने देश अथवा समाज के प्रति संवेदनशील बने रहे। उन्होंने अपने लेखन के माध्यम से समाज को जागृत करने का लगातार प्रयास किया। प्रेमचंद जनमानस के लेखक थे। वह सामान्य जनता के हितों को ध्यान में रखते हुए लिखते थे। अपनी इस लेखन कला के माध्यम से वह समाज को जागृत भी करते और समाज के लोगो को यह शिक्षा देते कि समाज में रहते हुए यह ध्यान रखना चाहिए कि हमें भाई-चारे की भावना को कायम रखना है। चूँकि जब समाज का प्रत्येक व्यक्ति धार्मिक कट्टरता से ऊपर होकर मानवीय संवेदना को सर्वोपरी रखेगा तभी समाज का विकास होगा। इसी संस्कृति का उदाहरण इनके 'प्रेमाश्रम' उपन्यास में देखने को मिलता है। उपन्यास में हिंदू-मुस्लिम एकता पर बल देते हुए प्रेमचंद ने दिखाया है कि कैसे विपरीत धर्म के होने के बावजूद कादिर और मनोहर पक्के मित्र हैं। इतना हीं नहीं पूरे गाँव में यदि मनोहर को किसी पर विश्वास है तो वह कादिर है। प्रेमाश्रम उपन्यास की पृष्ठभूमि में एक गाँव हैं जहाँ सबसे अधिक संख्या हिन्दू किसानों की है। उन्हीं किसानों के बीच रहता है कादिर। गाँव के लोग कादिर का बड़ा सम्मान करते हैं, वैसा ही सम्मान कादिर भी उनका करता है। उसी गाँव में गौस खां नाम का व्यक्ति है जो गाँव के लोगो को बहुत परेशान करता है। उसकी हरकतों से परेशान होकर मनोहर और बलराज उसकी हत्या कर देते हैं। मनोहर और बलराज द्वारा किये गए इस कुपित कार्य से गाँव के लोग दु:खी हैं। सारा गाँव मनोहर और बलराज को बुरा-भला कहता है। ऐसे समय में कादिर मनोहर का पक्ष लेते हुए गाँव वालों से कहता है "यारों ऐसी बात न करो। बेचारे ने तुम लोगो के लिए तुम्हारे हक की रक्षा करने के लिए यह सब कुछ किया। उसकी हिम्मत और जीबट की तो तारीफ नहीं करते, उसकी बुराई करते हो। हम सब के सब कायर हैं वही एक मर्द है।"[6] इस प्रकार देखा जा सकता है कि कादिर ने यहाँ अपने मित्र मनोहर का साथ दिया न की अपने धर्म से आने वाले गौस खां का। प्रस्तुत उपन्यास में प्रेमचंद की सामासिक संस्कृति के प्रति लगाव देख सकते हैं। अपनी इसी विचारधारा को वह जनमानस में विकसित करने की लगातार कोशिश करते रहे।

प्रेमचंद ने 'रंगभूमि' उपन्यास में सामासिक संस्कृति को चित्रित करते हुए, हिंदू, मुस्लिम और ईसाई जातियों को चित्रित किया है। जानसेवक एक ईसाई पात्र है और उसका नौकर ताहिर अली एक मुसलमान, वहीं नायकराम हिन्दू। प्रेमचंद ने इन तीनों ही अलग-अलग धर्म के पात्रों के माध्यम से सामासिक संस्कृति का बड़ा सुंदर चित्रण रंगभूमि उपन्यास में किया है। प्रेमचंद ने ताहिर अली के माध्यम से मुस्लिम संस्करों को चित्रित करते हुए आदर्श रूप में प्रस्तुत किया है। जब नायकराम ताहिर अली से सूरदास की ज़मीन का मामला हल करवाने के लिए इनाम देने की बात करता है तो वह उसे ज़वाब देता है कि "मुआजल्लाह पण्डा जी, ऐसी बात न कीजिए। मैं मालिक की निगाह बचाकर एक कौड़ी भी लेना हराम समझता हूँ। वह अपनी ख़ुशी से जो कुछ भी दे देंगे हाथ फैला कर ले लूँगा पर उनसे छिपा कर नहीं। खुदा उस रस्ते से बचाए। वालिद ने इतना कमाया, मरते वक़्त एक कौड़ी भी कफ़न के लिए नहीं थी। नहीं पण्डाजी, खुदा मेरी नियत को साफ़ रखे, मुझसे नमक हरामी

 Copyright @ 2024 Author

नहीं होगी। मैं जिस हाल में हूँ, उसी में खुश हूँ। जब उसके करम की निगाह होगी, तो मेरी भलाई की कोई सूरत निकल ही आयगी।"[7] ताहिर अली का व्यक्तित्व इमानदार पुरुष के रूप में उभर कर आता है। ताहिर अली धार्मिक सम्प्रदाय के विरुद्ध मानवीयता को ऊपर रखते हैं। सूरदास एक अँधा व्यक्ति है, जिसकी ज़मीन को जानसेवक अपने आर्थिक मुनाफे के लिए खरीदना चाहता है। वहीं सूरदास अपनी ज़मीन नहीं बेचना चाहता चूँकि उसकी ज़मीन से कई लोगों का भला होता है। ताहिर अली सूरदास की मंशा जनता है और इसी कारण वह जानसेवक को मनाने की कोशिश करता है कि वह अंधे सूरदास की ज़मीन न ले, "हुजूर उस अंधे की ज़मीन लेने का ख्याल छोड़ दें, तो बहुत ही मुनासिब हो। हजारों दिक्कते हैं। अकेला सूरदास ही नहीं, सारा मोहल्ला लड़ने पर तुला हुआ है। खासकर नायकराम पण्डा बहुत बिगड़ा हुआ है। वह बड़ा खौफनाक आदमी है। जाने कितनी बार फौज्दारियाँ कर चूका है। अगर ये सब दिक्कते किसी तरह दूर भी हो जाए, तो भी मैं आपसे यहीं अर्ज़ करूँगा कि इसके बजाए किसी दूसरी ज़मीन की फ़िक्र कीजिए-हुजूर यह अजाब का काम है। सैकड़ों आदमियों का काम उस ज़मीन से निकलता है सब की गाये वही चरती हैं, बारात ठहरती हैं, प्लेग के दिनों में लोग वहीं झोपड़े डालते हैं। वह ज़मीन निकल गई, तो सारी आबादी को तकलीफ होगी और लोग दिल में हमें सैकड़ों बद्दुआएं देंगे। इसका अजाब जरूर पड़ेगा।"[8] ताहिर अली द्वारा सूरदास और गाँव के अन्य लोगों की भलाई सोचना सामासिक संस्कृति को ही दर्शाता है। प्रेमचंद ने अपने उपन्यासों के माध्यम से सामासिक संस्कृति का अच्छा उदाहरण पेश किया है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि प्रेमचंद हिंदी साहित्य का वह हीरा रहे जिसकी चमक आज भी उनके पाठक वर्ग के बीच देखी जा सकती है। उनकी इस चमक का आधार है भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति। प्रेमचंद ने भारतीय संस्कृति पर खूब लिखा या यह कहना भी अनुचित नहीं होगा की उन्होंने भारतीय संस्कृति पर ही अपनी लेखनी जमाई है। भारतीय संस्कृति के उच्च रूप को प्रस्तुत करते हुए वह सामाजिक परिवर्तन को अपनाने पर अधिक बल देते थे। उनका मानना था कि व्यक्ति को रूढ़ियों में बंधे रहने की जगह परिवर्तन पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। उनका सहित्य यथार्थ की भूमि पर जन्मा और एक आदर्श समाज को स्थापित करता प्रतीत होता। अत: इसी आदर्श समाज को बनाने के लिए उन्होंने सामासिक संस्कृति को अपनी रचनाओं का माध्यम बनाया। सामासिक संस्कृति में आपसी भाई-चारे को सर्वोपरी रखा। प्रेमचंद ने अपनी रचनाओं के माध्यम से यह चित्रित किया की भारत में भले कई धर्म अथवा जातियां निवास करती हैं, भले उनके रीती-रिवाज़ अलग-अलग हैं लेकिन उनकी मानसिकता एक दूसरे के प्रति आत्मीयता की भावना रखती है। धर्म के कुछ पुछल्लों को छोड़ दे तो सामान्य जनता एक दूसरे के साथ प्रेम भाव से ही रहती है।

अंतत: कहा जा सकता है प्रेमचंद धार्मिक भेदभाव से ऊपर मानवता को रखते थे। उन्होंने हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई सबको एक ही माना हैं। अपने साहित्य लेखन में उन्होंने सामासिक संस्कृति के किसी न किसी रूप को अवश्य उजागर किया।

संदर्भ-ग्रंथ-सूची :-

1 सं. पाण्डेय, शम्भुनाथ (1977). भारतीय जीवन और संस्कृति, केन्द्रीय हिंदी संस्थान, आगरा, पृ.-4
2 स. रामानंद (1996). प्रेमचंद रचनावली भाग 8, ज्ञानवाणी प्रकाशन, दिल्ली, पृ.-101
3 डॉ. शर्मा, रामविलास (1967), प्रेमचंद और उनका युग, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृ.-8
4 डॉ. गुप्ता, श्रीमती शीला, प्रेमचंद और उनका साहित्य, पृ.-31
5 प्रेमचंद, 1998, सेवासदन, सरस्वती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ.-122,
6 प्रेमचंद,1979, प्रेमाश्रम, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ.-223
7 प्रेमचंद, 1995, रंगभूमि, सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद, पृ.-63
8 प्रेमचंद, 1995, रंगभूमि, सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद, पृ.-71

 Copyright @ 2024 Author